पूर्वोत्तर सृजन पत्रिका: विशेषज्ञों द्वारा समीक्षित वार्षिक हिंदी ई-पत्रिका
वर्ष: 2; संख्या:2; 2021; पृष्ठ संख्या: 44-54

कबुई लोककथाओं के विविध पक्ष

✍ लुजिकलू पानमेई

मणिपुर प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर पूर्वोत्तर भारत का एक राज्य है। इस राज्य की राजधानी इम्फाल है। यहाँ कबुई, तांगखुल, मरिंग कॉम, मैतेई आदि विभिन्न जाति-जनजातियाँ निवास करती हैं। मणिपुर समतल एवं पर्वतीय क्षेत्र में विभाजित है। मैतेई समतल मैदानों में तथा अधिकांश जनजातीय समुदाय पर्वतीय भू-भाग में निवास करते हैं। कबुई नागा उप-जनजातियों में से एक है और यह मुख्यत: मणिपुर, नागालैंड और असम में निवास करती है। आजकल कबुई जनजाति के लोग स्वयं को रोंगमई नाम से संबोधित करना पसंद करते हैं। रोंगमई दो शब्दों के मेल से बना है, 'रॉन्ग' एवं 'मई'। 'रॉन्ग' अर्थ 'दक्षिण' है तो 'मई' का अर्थ 'जन' से है।

लोक-मान्यता के अनुसार कबुई जनजाति पूर्व में तमेंगलोंग नामक पर्वत शृंखला में रहती थी। परवर्ती काल में यह जनजाति पूर्वोत्तर की पहाड़ियों में आकर बस गयी। यह जनजाति मंगोलियाई जाति के तिब्बती-बर्मी परिवार के अंतर्गत आती है। कबुई जनजाति मुख्यत: इम्फाल-पूर्व, इम्फाल-पश्चिम, बिष्णुपुर एवं थौबाल जिले में पाई जाती है। इसके अलावा यह जनजाति नागालैंड में कोहिमा, दिमापुर तथा जुलुके में और असम में कछार और सिल्चर में भी निवास करती है। भारतीय संविधान के तहत यह अनुसूचित जनजाति के अंतर्गत आती है। कबुई जनजाति की अपनी समृद्ध संस्कृति, रीति-रिवाज और परंपराएँ हैं। जादोनांग एवं रानी गाइदिनल्यू जैसी महान विभूतियाँ, जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था, वे इसी जनजाति से थे।

लोककथा शब्द 'लोक' और 'कथा' – इन दो शब्दों के सम्मिश्रण से बना है। लोककथा शब्द अंग्रेजी के 'फोकटेल' शब्द का पर्यायवाची रूप है। 'लोक' हमारे चारों ओर फैला हुआ वह मानव समूह है, जो असीम ज्ञान का समुद्र है तथा इसके बहुआयामी ज्ञान का माध्यम मौखिक है। वे अपने बहुआयामी ज्ञान और अभिरुचियों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक तथा अपने चतुर्दिक परिवेश में

मौखिक रूप से ही फैलाते हैं। सृष्टि के निर्माण के समय ही लोककथा का जन्म हुआ था। प्राचीन काल से ही लोगों में कथा कहने और सुनने की प्रथा प्रचलित थी। आदिम युग से ही मानव अपने मनोभावों को कथा के रूप में अभिव्यक्त करते आये हैं। लोककथा का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है और समय के अनुसार लोककथा में भी बदलाव आता है ।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार - "लोककथा शब्द मोटे तौर पर लोक प्रचलित उन कथाओं के लिए व्यवहृत होता रहा है, जो मौखिक या लिखित परंपरा से क्रमशः एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होते रहे हैं।"[1] डॉ. सत्या गुप्ता के अनुसार - "लोककथाओं में लोक मानस की सब प्रकार की भावनाएँ तथा जीवन-दर्शन समाहित हैं, भूत जानने की जिज्ञासा, घटनाओं का सूत्र, कोमल, पुरुष भावनाएँ ; सामाजिक, ऐतिहासिक परंपराएँ, जीवन-दर्शन के सूत्र सभी कुछ लोककथा में मिल जाते हैं।"[2]

इस प्रकार लोककथा की उत्पत्ति मानव जन्म से ही मानी जाती है। लोक में कहानी कहने की कला सर्वाधिक प्राचीन है। आदिम युग से ही मानव अपनी अनुभूतियों को कथा के रूप में अभिव्यक्त करते आये हैं । लोकजीवन को सहूलियत प्रदान करने हेतु जो चलन मदद करते हैं, वे रीति-रिवाज कहलाते हैं। रीति-रिवाज समाज के परस्पर संबंधों को एकरूपता प्रदान करने के साथ ही शिष्टता का प्रारंभिक पाठ भी सिखाते हैं। ऐसे में रीति-रिवाजों का फैलाव व्यापक है। प्रायः जन्म, बाल्यकाल, विवाह उत्तराधिकार, प्रौढ़ जीवन के रीति-रिवाज तथा अनुष्ठान एवं सामाजिक जीवन में प्रचलित विभिन्न व्रत, त्योहार उत्सव आदि को इसमें समाहित किया जाता है। रीति-रिवाजों को दो वर्गों में विभक्त किया गया है- 1. विधि व 2. निषेध (अर्थात् यह करो तथा यह न करो)। ऐसे ही रीति-रिवाज एक ऐसी परंपराएँ या संस्कार हैं, जो पीढ़ी दर पीढ़ी मानव जातियों में चले आये हैं। इनका संबंध दैनिकचर्या या जीवन की प्रमुख घटनाओं से होता है। कभी-कभी ये धर्म और त्योहार का भी हिस्सा होते हैं।

कबुई समाज में प्रचलित रीति-रिवाज एवं परंपराओं के कई रूप हैं। समाज में जन्म से लेकर मृत्यु तक के सारे संस्कार रीति-रिवाज़ों व परंपराओं द्वारा ही संचालित होते हैं। कबुई समाज में जन्म से संबंधित रीतियाँ अधिक पाई जाती हैं। जैसे शिशु पैदा होते ही 'पेम्बम्लैमै' नामक पूजा की जाती है। 'पेम्बम्लैमै' का अर्थ है-नवजात शिशु का अचानक भयभीत होकर रोना । उसे शांत करने के

लिए ही यह पूजा की जाती है। शिशु को नींद न आने पर 'पेम्बंपुई - पेम्बंपु' नामक देवी-देवता की पूजा की जाती है। ताकि शिशु अपनी नींद पूरी कर स्वस्थ रह सकें ।

शिशु के जन्म के पाँच दिन बाद एक और पूजा की जाती है। जिसे 'नाजुम्गाइमै' कहा जाता है। कबुई जनजाति के लोक-विश्वास के अनुसार इस पूजा के बाद ही नवजात शिशु को मनुष्य होने का दर्जा मिलता है। पूजा के माध्यम से शिशु के जीवन में सुख-समृद्धि की कामना की जाती है। इसतरह कबुई समाज के विविध रीति-रिवाज पाये जाते हैं और लोककथाओं में उनकी अभिव्यक्ति मिलती है।

विवाह संबंधित रीति-रिवाज और लोककथाएँ :

कबुई जनजाति में समान गोत्र वालों से शादी करना मना है। मान्यता है कि समान गोत्र में शादी करने से जीवन में अनेक कष्ट-बाधाएँ आती हैं, अपाहिज शिशु जन्म लेते हैं। दांपत्य जीवन में किसी एक के जल्दी बिछुड़ने अर्थात् मृत्यु होने की संभावना रहती है। यह भी विश्वास किया जाता है कि उनके वंश में पीढ़ी दर पीढ़ी किसी न किसी रूप में अनिष्ट घटनाएँ बार-बार होंगी और वे सुख की जिंदगी नहीं जी पायेंगे।

माता-पिता की रजामंदी न होने पर प्राय: प्रेमियों द्वारा भागकर विवाह करना भी समाज में प्रचलित है। इस समाज में प्रेम विवाह संबंधित कई लोककथाएँ हैं, जिनमें 'नकम्-रेन्सोन्नेइ', 'जरुइनन्ग लेंगतोंग' आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त कुछ लोककथाओं में प्रेमी-प्रेमिकाओं के वियोग की कथा भी उपलब्ध हैं। जिनमें माता-पिता तथा खलनायक द्वारा प्रेमियों के मिलन में बाधा उत्पन्न किया जाता है। इसी वजह से प्रेमियों के जीवन का अंत सुखद न होकर कभी-कभी दु:खद भी होता है। इस प्रकार की लोककथाओं के नाम हैं – 'गुइनिंगनै', 'लुचेन्लू', 'संजोल्लू', 'गुइरेम्नेइ-गुइरेमनंग', 'मेईरियंग-लुबोन्नेइ' इत्यादि।

संयोग प्रेम कथा 'नकम्-रेन्सोन्नेइ' के अनुसार- "नकम् नामक युवक आर्थिक दृष्टि से एक कमजोर परिवार से था। वह देखने में शक्तिशाली, ऊँचा कद, सरल एवं विनम्र व्यवहार का था, जिसके कारण सभी लोग उसे पसंद करते थे। नकम् तथा रेन्सोन्नेइ एक दूसरे से प्रेम करते थे। रेन्सोन्नेइ निर्धन युवक नकम् के साथ शादी कर लेती है और दोनों को एक पुत्र प्राप्त हो जाता है ।"[3]

'गुइरेम्नेइ-गुइरेमनंग' एक वियोग प्रेम कथा है। गुइरेम्नेइ-गुइरेमनंग दोनों एक-दूसरे से बेहद प्रेम करते थे परंतु दोनों जीवन में कभी एक नहीं हो

पाये। इस प्रेम कथा में ऐसी घटना घटी जो बहुत ही दर्दनाक है। बुरे इंसान और जलन की भावना की वजह से सच्चे प्यार का न मिल पाने का उदाहरण हमें देखने को मिलता है। उसके प्रेमी ने अपनी प्रेमिका से कभी वादे किये थे कि मैं जब तक वापस लौट कर ना आऊं तो तुम इस कंगन को मेरे प्राण का प्रतीक मानकर संभाल कर रखना। अगर इस कंगन का मुँह खुला रहेगा तुम समझ लेना कि मैं इस दुनिया में नहीं रहा। इस बात को सुनकर एक दोस्त ने गुइरेमनंग के जाने के पश्चात् चुपके से उस कंगन के मुंह को खोल दिया और कहा कि तुम्हारे प्रेमी की मौत हो गई है यह कहकर उसने उनके साथ धोखे से शादी कर ली।"[4]

उत्तराधिकारी से संबंधित लोककथाओं में रीति-रिवाज :

कबुई जनजाति में उत्तराधिकारी से संबंधित रीति-रिवाज भी प्रचलित है। घर के सबसे छोटे पुत्र को उत्तराधिकार मिलता है, क्योंकि बड़ा पुत्र माता-पिता का पहला संतान होने के कारण उसे लाड़-प्यार से पाला-पोसा जाता है । उसकी हर ख्वाहिशों को पूरा करने के कारण वह आराम की जिंदगी जीता है। जब कि छोटे पुत्र को ऐसी सुख सुविधाएँ नहीं मिलतीं। क्योंकि छोटे पुत्र के बड़े होने पर माता-पिता बुजुर्ग हो जाते हैं और कमजोर भी। जिस कारण माता-पिता अपने सबसे छोटे पुत्र को उनकी देखभाल करने के लिए तथा वात्सल्य प्रेम को दर्शाते हुए उत्तराधिकारी बना देते हैं। यह भी चलन है कि अगर किसी घर में पुत्र न होकर पुत्री ही हो तो छोटी पुत्री को उस घर का उत्तराधिकारी बना दिया जाता है। 'उत्तराधिकारी के चुनाव' नामक कबुई लोककथा में उल्लेख है कि ङुईबा नाम के राजा की दो पत्नियाँ थीं। उनकी दोनों पत्नियों से सात पुत्र हुए। सातों पुत्रों में से किसको उत्तराधिकारी बनाया जाए यह समस्या ङुईबा के सामने खड़ी हो गई। अंत में ङुईबा ने अपने छोटे भाई चतिउ के पास इस समस्या का हल निकालने हेतु अपने सातों पुत्रों को कौब्रु पर्वत भेज दिया। भेजते हुए उन्हें कहा गया- रास्ते में जिस स्थान पर गाय पानी पीकर पेशाब करें और कुत्ता भौंकने लगे वहीं पर अपनी-अपनी पोटली खोल कर देखना। जिस की पोटली में मुर्गे का सिर मिलेगा वही राजा बनेगा।

सातों भाई राजधानी की ओर चल पड़े। जहाँ मार्ग में गाय ने पेशाब किया और कुत्ता भौंकने लगा, वही सभी भाइयों ने अपनी-अपनी पोटली खोली। मुर्गे का सिर सबसे छोटे भाई मंलेम्बा की पोटली में मिला। इसके बाद सारे भाई अपने पिता के पास पहुँचे और सारी बातें बता दीं। ङुईबा मंगलेम्बा को राजा बना दिया गया। इसी कारण कबुई (रोंगमई) जनजाति में आज भी सबसे छोटे

पुत्र को ही पिता का उत्तराधिकारी बनाए जाने की परंपरा है।[5]

मृत्यु से संबंधित लोककथाओं में लोकविश्वास :

कबुई जनजाति में मृत्यु से संबंधित यह रीति-रिवाज है कि घर के किसी सदस्य की मृत्यु होने पर उसके शरीर के किसी भाग में काला चिन्ह लगाया जाता है। विश्वास है कि यह चिन्ह लगाने से उसके पुनर्जन्म के समय वह व्यक्ति फिर से अपने ही घर या परिवार में पुत्र-पोते के रूप में जन्म लेता है। विश्वास यह भी है कि मृत व्यक्ति के अंतिम संस्कार के समय उनकी कब्र में 'लउखम्तेंग' नामक नुकीली लकड़ी मिट्टी में गाढ़ी जाती है। लउखम्तेंग लकड़ी को गाढ़ने का अधिकार केवल पुरुष को मिलता है, स्त्री को नहीं। पुरुषों में घर के सबसे छोटे पुत्र को पहले अधिकार दिया जाता है। अगर उस मृत व्यक्ति के घर में कोई संतान न हो तो उनके रिश्तेदारों की सहमति द्वारा यह अधिकार अन्य को प्राप्त होता है। यह इसलिए किया जाता है क्योंकि कबुई जनजाति में विश्वास है कि मृत्यु के बाद भी 'मृत्युलोक' होता है, जिसे 'तरोइलम' कहते हैं। ऐसा विश्वास है कि मृत्यु के बाद तरोइलम जाते वक्त मृत व्यक्ति को यह भरोसा दिलाया जाता है कि हर विपत्ति में तुम्हारा यह पुत्र सदैव तुम्हारे साथ है।

'मेईजीपु' लोककथा में मेईजीपु की पत्नी की मृत्यु हो जाती है। मृत्यु से संबंधित प्रसंग इस तरह व्यक्त है- "पत्नी की बात न मानने पर वह पति को कहती है- अच्छा! ठीक है, तुम भी मेरे घर तरोइलम में चलो। पति ने पूछा तुम्हारा घर कहाँ है? पत्नी ने अपनी कब्र के छेद के अंदर पति को ले जाकर तरोइलम का रास्ता दिखाया। वहाँ का जीवन तो बिल्कुल विपरीत था। पीजिमपुई यानि टिड्डे हिरण जैसे दिखाई देते हैं जिसका मृत्युलोक में पशु समझकर शिकार करते हैं।इस तरह 'पीजिमपुई' में विपरीत कार्य होते हैं। कबुई जनजाति यह मानती है कि मृत्युलोक के बाद धरती के अंदर और एक स्थान पाया जाता है, जिसे 'थुनतदीजांग' कहते हैं। यह स्थान गाने में भी पाया गया है– अलिमबंगजांग नमथै नलाइsssजो कंदो.... अर्थात् एक 'परिबंग' परि नामक वृक्ष है, जो पीजिमपुई के समीप उगता है। उस पेड़ के नीचे की ओर जाने पर थुनतदीजांग नामक एक स्थान है। ऐसा माना जाता है कि मनुष्य अपने कर्म के अनुसार मोक्ष की प्राप्ति करता है। कबुई यह विश्वास करते हैं कि मृत्युलोक के वासी को पुनर्जन्म प्राप्त होता है, लेकिन इन थुनतदीजांग में प्रवेश करने वालों का कोई पुनर्जन्म नहीं होता।[6]

लोककथाओं में वेश-भूषा :

कबुई जनजाति की वेश-भूषा अत्यधिक रंगीन है, जो सौंदर्य से भरपूर एवं धार्मिक मूल्यों से जुड़ी हुई है। जनजाति की वेश-भूषा में मुख्य रूप से स्त्री 'फैशोइ' अर्थात् स्त्री कमर से पाँव तक ढकी मेखला को लपेटती हैं। 'फैङाउ' अर्थात् शॉल, अलंकार और अन्य सामान जैसे हेडगियर्स, सेश आदि भी शामिल हैं। विभिन्न अवसरों और उम्र के आधार पर तथा उनके उपयोग के आधार पर फैशोई और ड्रेप्स की किस्में हैं। 'लेंगतोंग' की कथा में हम कबुई जनजाति की वेश-भूषा के महत्व को देख सकते हैं । इस लोककथा में नायक लेंगतोंग अपनी नायिका से मिलने उसके घर चला जाता है। घर के सभी सदस्य लेंगतोंग को खोज रहे थे कि वह कहाँ चला गया होगा। अंत में उस नायिका के मोहल्ले में खोजने पर घर में ही बैठा हुआ पाया गया। घरवाले के आने पर नायिका घर के भीतर चली जाती है । इस तरह लेंगतोंग अपनी दिल की बात घर वालों को बता देता है कि वह उसे कितना चाहता है और उससे विवाह करने का प्रस्ताव भी रखता है। तब उस लड़की को बाहर बुलाया जाता है। तभी लड़की 'लांगमु फैशोई' (शादी-ब्याह में पहेंने जाने वाले वस्त्र मेखला) पहन कर आती है।[7] कहानी में हमें जानकारी मिलती है कि उस समय से ही कपड़े की बुनाई विकसित हो चुकी थी। 'भगवान और इंसान' की कथा में भी कबुई समाज के वस्त्र से संबन्धित रीति-रिवाज का प्रसंग आता है। यह कथा कुछ इस प्रकार है- जब भगवान और इंसान एक साथ जी रहे थे तब भगवान इंसान की फैङाउ (कबुई जनजाति के शॉल को कहते हैं) को दोपहर में अपने पास छुपा देते हैं और रात होने पर इंसान उस फैङाउ को खोजता है। अंत में मनुष्य भगवान के गद्दे के नीचे अपने फैङाउ को समेटा हुआ पाता है। तब इंसान भगवान से पूछता है कि आपने इंसान के वस्त्र को क्यों लिया? भगवान ने उत्तर दिया कि इंसान के कपड़े उन्हें बहुत सुंदर और पसंद आये जिस कारण उन्होंने उसे छिपा लिया है।[8] इस तरह यह विश्वास किया जाता है कि कभी भगवान एवं इंसान साथ रह रहे थे, तब से कबुई जनजाति के पोशाक आदि के प्रयोग होते थे।

लोककथाओं में त्योहार :

कबुई जनजाति मौसम के अनुसार विभिन्न त्योहार मनाती हैं। यहाँ उत्सव अक्सर अपने शारीरिक क्षमता तथा कौशल को प्रस्तुत करने के लिए होता है। खेती-बाड़ी से संबंधित तथा फसल काटने के समय आदि में त्योहार मनाते हैं। जैसे गाङ्-ङाई, ली-ङाई एवं गुदुई-ङाई आदि। इनमें से गाङ्-ङाई त्योहार को अधिक महत्वपूर्ण माना

जाता है। यह पाँच दिन चलता है, जिन्हें क्रमश: ङाइगङ्-पूइनै, तम्चनपुइनै, ङानङाई, नपचनपूइनै तथा राङ्पत का दिन कहा जाता है। 'खुरुणा' नामक लोककथा में अपनी सौतेली माँ द्वारा प्रताड़ित एवं अत्यधिक अत्याचार की वजह से नायक के हॉर्नबिल बनने की एक मार्मिक कथा का वर्णन है। इस कथा में उत्सव से संबंधित कार्यक्रम देखने को मिलते हैं और साथ ही कबुई समाज में उत्सव के दौरान युवक-युवतियों को एक दूसरे के साथ मिलकर हरेक कार्य सफलतापूर्वक करते हुए देखा जाता है। यही इस लोककथा में दर्शाया गया है। नायक खुरुणा द्वारा पक्षी बनने के बावजूद भी अपने प्रेम को व्यक्त किया गया है। इस कथा में जब उत्सव की नजदीकी पर खुरुणा अपने अन्य पक्षियों के संग आकाश में उड़ता हुआ प्रतीत होता है। नीचे धरती पर युवक-युवतियाँ उत्सव की नजदीकी की तैयारी में 'जौ' अर्थात् चावल का शराब बनाने की प्रक्रिया में जुटे हुए थे, तभी आकाश में खुरूणा अपने एक पंख को उखाड़कर नीचे धरती की ओर गिराता है, जो कि उसकी प्रेमिका की ओखली के मूसल के ठीक ऊपर अटक जाता है।[9] इस तरह कबुई लोककथाओं में उत्सव से संबंधित कुछ रोचक अंश पढ़ने को मिलते हैं।

लोककथाओं में पूजा-पाठ :

कबुई समाज दो धर्मो को मानते हैं- (i) परंपरागत धर्म (ii) ईसाई धर्म। बहुत-सी जनजातियाँ अब भी अपनी परंपरागत जनजातीय प्रथा को अपनाती हैं। उनका यह विश्वास है कि बलि आदि चढ़ाने पर 'रागोंग' अर्थात् भगवान उनकी रक्षा करेंगे तथा सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होगी। 'माइपुई-काईताऊ' लोककथा में खथिथेंग नामक युवक ने भगवान के मार्गदर्शन पाने हेतु पूजा के तौर पर गाय की बलि चढ़ाई था। इसका वर्णन इस प्रकार मिलता है - स्वप्न से निकलकर भगवान द्वारा दिये गये मार्गदर्शन का पालन करते हुए उसने देखा कि दो पहाड़ों के बीच के रास्ते में पानी की परछाई में एक लंबा-सा पेड़ उगा हुआ है। लेकिन जब भी वह उसे काटने की कोशिश करता, तब उसे वह गायब मिलता है, जो बाद में खोजने पर भी कहीं नहीं मिलता। अंत में उसने भगवान से प्रार्थना की और गाय की बलि चढ़ायी, तब उसे वह पेड़ प्राप्त होता है। जिसे वह इच्छानुसार खम्बा बनता है। उसके बाद उसके जीवन में परिवर्तन होता है और वह धनवान बन जाता है।[10]

'चरै- जुथुंग' भाग-2 कहानी में पूजा-पाठ से संबंधित प्रसंग देखने को मिलता है। जब उस घर का मालिक अपने खेत को देखने जाता है तब

विश्राम घर न पाने पर राखांग अर्थात् देवी-देवता भूत-प्रेत की पूजा करते हैं। कहानी में दो दोस्त चरै और जुथुंग अत्यधिक नटखट एवं शैतान होते हें, दोनों की शरारत के कारण आसानी से लोग बेवकूफ बन जाते हैं। उनके किये गये कार्य को लोग भूत-प्रेत द्वारा किया हुआ समझ लेते थे।[11]

लोककथाओं में आजीविका :

कबुई जनजाति में आजीविका के संबंध में खेती-बाड़ी करना मुख्य व्यवसाय है। इस समुदाय के लोग फसल की खेती, जीव-जंतु का पालन-पोषण करना तथा सब्जी उगाना आदि में दिलचस्पी रखते हैं। अनेक लोककथाओं में इसका प्रभाव देखने को मिलता है - 'लाउजिपमै परि'1, 'लाउजिपमै परि' 2, 'चना-चनैपरि', 'लूचेलु परि', 'नकम्- रेंगसोंनै परि', 'करापै बी-रू लिंगमै परि' आदि।

'जरुईनंग' नामक लेंगतोंग लोककथा में खेत से संबंधित प्रसंग इस प्रकार है- लेंगतोंग पहाड़ी इलाके में खेती-बाड़ी करने जाता है। जहाँ उसे दो-तीन महीने लग जाते हैं।[12]

'चरै-जुथुंग' भाग 2 कहानी के एक प्रसंग के अनुसार- "देवी के लिए बकरी चढ़ाने हेतु वे दोनों मित्र बकरी ढूँढ़ने जाते हैं। लेकिन बकरी न लाकर वे दूसरों के खेत में घुसकर मिर्ची चुरा लेते हैं।"13

लोककथाओं में खान-पान :

कबुई समाज खान-पान के संबंध में मिश्रित भोजन पसंद करता है। उनकी खाद्य सामग्री जंगल और बाजारों में पायी जाती हैं। उनके मुख्य भोजन चावल, सब्जी, मांस-मछली आदि होते हैं। साथ ही कद्दू, अर्बी(याम), मटर, आलू ,टमाटर, सेम और अन्य हरी सब्जियाँ कृषि उत्पादों के पूरक हैं। वे बैम्बू शूट, किण्वित मछली आदि के शौकीन भी हैं ।

'अन्सा-मिचरूंग' दो भाइयों की लोककथा में भी 'बी-रु' (अर्बी) जैसे जड़ से संबंधित सब्जियों के खाने का उल्लेख मिलता है।इस कथा में बताया जाता है कि जिसमें मिचरूंग पहाड़ी अतिथियों को छल से उन सब्जियों का हड़पने के लिए एक चाल चलता है। उस चाल में अपना तर्क और कुछ नियम रखता है और नियम का उल्लंघन हो तो सभी के हरेक बी-रु, मीठी आलू आदि सामान उन्हें देने होंगे।[14]

'संलू परि' में माँ हिरणी को खाने का उदाहरण देखने को मिलता है। कथा इस प्रकार है-

एक हिरणी मनुष्य के रूप में रहिती है। बाद में सास ससुर को पता चल जाता है कि वह मनुष्य नहीं,हिरणी है, तब वह शर्म से अपने पति और बच्चों को छोड़ जंगल चली जाती है। बाद में उसी हिरणी को खाने के लिए घर में लाया जाता है। हिरणी को उसके बच्चे उसे पहचान लेते हैं कि वह उसकी माँ है और उन्हें भोजन रूप में खा नहीं सकते। लेकिन भाइयों ने कहा कि यह तो एक हिरण है, एक पशु है, एक जानवर जिसे खाया जाना चाहिए। इससे स्पष्ट होता है कि कबुई जनजाति के लोग हर प्रकार के माँस का भक्षण करते हैं और इसके साथ ही जड़ से संबंधित खाद्य सामग्री भी उनके खाद्याभ्यास का हिस्सा है।[15]

इस तरह निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि कबुई लोककथाओं में जीवन और समाज के विविध पक्ष मिलते हैं। आज के आधुनिक समाज में भी कबुई जनजाति में ऐसे रीति- रिवाजों का प्रचलन है, जो उनके जीवन को सुखद एवं कल्याणकारी भविष्य की ओर अग्रसर करते हैं। इससे उनके जीवन में सहूलिय पैदा होती है तथा विविध जीवनगत समस्याओं का निराकरण भी इनसे हो जाता है।

संदर्भ-सूची:

1.लोक साहित्य : सिद्धांत और प्रयोग-श्रीराम शर्मापृष्ठ संख्या- 104

2.खड़ी बोली का लोक साहित्य, डॉ. सत्या गुप्ता, पृ. सं- 174

3.स्वयं संग्रहित लोककथा, 'नकम् – रेंगसोननेइ', स्त्रोत – चाउबा कमसोन, दिनांक – 10.11.2019, संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

4.मणिपुरी लोककथा संसार, देवराज,पृष्ठ संख्या-63

5.मणिपुरी लोककथा संसार-देवराज,पृष्ठ संख्या– 66

6.स्वयं संग्रहित लोककथा, 'मेइजीपु परि', स्त्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक – 14.12.2019, संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

7.स्वयं संग्रहित लोककथा, 'जरुईनंग लेंगतोंग परि', स्त्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक – 14.12.2019, संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

8.स्वयं संग्रहित लोककथा, 'भगवान और इंसान परि', स्त्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक –14.12.2019, स्वयं संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

9.स्वयं संग्रहित लोककथा, 'खुरुणा परि', स्त्रोत – गैजइपु थाइमेई, दिनांक – 12.11.2017, स्वयं संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

10.स्वयं संग्रहित लोककथा ' माइपुई – काईताऊ परि', स्त्रोत – गैजइपु थाइमेई, दिनांक – 12.11.2017, स्वयं संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

11.स्वयं संग्रहित लोककथा 'चरै - जुथुंग परि भाग 2', स्त्रोत – खोइथाओ पामेई, दिनांक – 17.02.2019,संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

12.स्वयं संग्रहित लोककथा, 'जरुईनंग लेंगतोंग परि', स्त्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक – 14.12.2019, संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

13.संग्रहित लोककथा 'चरै – जुथुंग भाग 1 परि', स्त्रोत – खोइथाओ पामेई, दिनांक – 17.02.2019 स्वयं संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

14.स्वयं संग्रहित लोककथा ' अन्सा - मिचरुंग परि', स्त्रोत – लन्बिलुंग गोलमेई, दिनांक – 23.03.2018, स्वयं संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

15.स्वयं संग्रहित लोककथा, ' संलू - परि', स्त्रोत – रागोंगनिंग गांगमेई, दिनांक – 24.03.2018, स्वयं संग्रहकर्ता – लुजिकलू पानमेई

ग्रंथ-सूची:

शर्मा, श्रीराम. लोक साहित्य: सिद्धांत और प्रयोग. नवीनतम संस्करण. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर,1981

पूर्वोत्तर सृजन पत्रिका

गुप्ता, सत्या. खड़ी बोली क लोक साहित्य

देवराज,मणिपुरी लोककथा संसार.पहला. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन

स्वसंग्रहित लोककथा:

‘अन्सा - मिचरुंग परि’, स्रोत – लन्बिलुंग गोलमेई, दिनांक – 23.03.2018

‘खुरुणा परि’, स्रोत – गैजइपु थाइमेई, दिनांक – 12.11.2017

‘चरै – जुथुंग भाग 1 परि’, स्रोत – खोइथाओ पामेई, दिनांक – 17.02.2019

‘चरै - जुथुंग परि भाग 2’, स्रोत – खोइथाओ पामेई, दिनांक – 17.02.2019

‘जरुईनंग लेंगतोंग परि’, स्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक – 14.12.2019

‘भगवान और इंसान परि’, स्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक –14.12.2019

‘माइपुई – काईताऊ परि’, स्रोत – गैजइपु थाइमेई, दिनांक – 12.11.2017

‘मेइजीपु परि’, स्रोत – गाईङम्लुंग मरिंगमै, दिनांक – 14.12.2019

‘नकम् – रेंगसोननेइ’, स्रोत – चाउबा कमसोन, दिनांक – 10.11.2019

‘संलू - परि’, स्रोत – रागोंगनिंग गांगमेई, दिनांक – 24.03.2018

संपर्क-सूत्र:
शोधार्थी,हिंदी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय
काँचीपुर,इम्फाल-795003

पूर्वोत्तर सृजन पत्रिका